ईशोपनिषदः मुख्य मंत्र

अजय तिलंथे

ॐ

ईशोपनिषद

कर्म और त्याग का संतुलन

“उस पर ब्रह्म परमेश्वर को समर्पित है, जो हर जगह और हर वस्तु में विद्यमान है।”

“ॐ असतो मा सद्गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्मा अमृतं गमय॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥”

असतो मा सद्गमय → असत्य और नश्वरता से सत्य और शाश्वतता की ओर ले चलो।
तमसो मा ज्योतिर्गमय → अज्ञान और भ्रम के अंधकार से ज्ञान और आत्मबोध के प्रकाश की ओर ले चलो।
मृत्योर्मा अमृतं गमय → मृत्यु और पुनर्जन्म के चक्र से अमरत्व और मोक्ष की ओर ले चलो।
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः → यह तीन बार "शांति" का उच्चारण है, जो तीन स्तरों पर शांति की कामना करता है:
आध्यात्मिक शांति (मन और आत्मा में)
भौतिक शांति (शरीर और वातावरण में)
दैविक शांति (प्रकृति, देवताओं और ब्रह्मांडीय शक्तियों से)
भावार्थ
यह मंत्र जीवन की सबसे गहरी प्रार्थना है — असत्य से सत्य, अंधकार से प्रकाश और मृत्यु से अमरत्व की ओर मार्गदर्शन की याचना। अंत में "ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः" यह दर्शाता है कि मनुष्य केवल ज्ञान और मोक्ष ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण अस्तित्व में शांति चाहता है।

इसे रोज़मर्रा में अपनाने का अर्थ है: सत्य बोलना, ज्ञान की खोज करना, मृत्यु के भय से मुक्त होकर आत्मा की शाश्वतता को समझना और हर परिस्थिति में शांति बनाए रखना।

प्रस्तावना

उपनिषद वेदों का दार्शनिक और आध्यात्मिक भाग हैं। इन्हें वेदांत भी कहा जाता है क्योंकि ये वेदों के अंतिम हिस्से में आते हैं।

वेद संबंध: ईशोपनिषद् शुक्ल यजुर्वेद के वाजसनेयी संहिता (अध्याय 40) का हिस्सा है।

उपनिषदों में जीवन, आत्मा, ब्रह्म और जगत के रहस्यों पर गहन विचार किया गया है।
संख्या: लगभग 108 उपनिषद माने जाते हैं, जिनमें से 11–13 प्रमुख उपनिषद हैं (जैसे ईश, केन, कठ, मुण्डक, छांदोग्य, बृहदारण्यक आदि)।
मैंने इस पुस्तक में ईश और केन के कुछ महत्वपूर्ण मंत्रों का उल्लेख किया है, जिससे पाठक अत्यधिक कम समय में बहुत कुछ समझने का प्रयास कर सकते हैं।

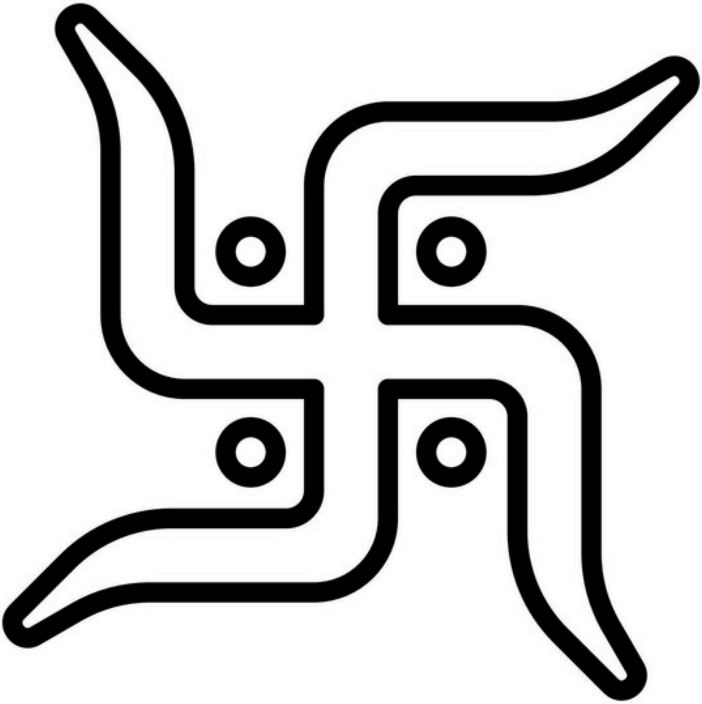
विषय: आत्मा और परमात्मा का संबंध, ब्रह्म का स्वरूप, मोक्ष का मार्ग, और ज्ञान की महत्ता।
संदेश: उपनिषद सिखाते हैं कि परम सत्य शब्दों और इंद्रियों से परे है, और उसे केवल आत्मज्ञान व ध्यान से अनुभव किया जा सकता है।

अजय तिलंथे

शांति पाठ

ॐ सह नाववतु।सह नौ भुनक्तु।सह वीर्यं करवावहै।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

यह शांति मंत्र हमें यह सिखाता है कि गुरु और शिष्य दोनों ईश्वर की कृपा से सुरक्षित रहें, उनका पालन–पोषण हो, वे मिलकर पराक्रम और उत्साह के साथ अध्ययन करें, उनका ज्ञान तेजस्वी और फलदायी बने तथा उनके बीच कभी द्वेष या मतभेद न हो। अंत में तीन बार "शांति" का उच्चारण करके साधक दैविक, भौतिक और आध्यात्मिक स्तर पर पूर्ण शांति की कामना करता है, ताकि अध्ययन और जीवन दोनों ही सौहार्द, संतुलन और स्थिरता से परिपूर्ण हों।



कर्म और त्याग का संतुलन

ॐ ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च
जगत्यां जगत्।
तेनत्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः
कस्यस्विद्धनम्॥

यह श्लोकमनुष्य को त्याग, संतोष और ईश्वर–व्याप्ति का बोध कराता है। यह उपनिषदका मूल संदेश हैकि ईश्वर सर्वत्र है और जीवन का उद्देश्य उसे पहचानना है।

ईशोपनिषदके इस प्रथम मंत्रको वेदांत दर्शन का सार कहागया है। शंकराचार्य नेअपनी टीका में लिखाहै कि

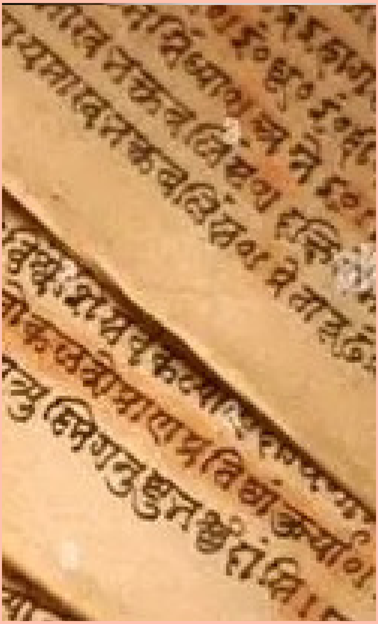
इस मंत्र का मूल भावयह है कि समस्तजगत ईश्वर से व्याप्त है। जो कुछभी इस संसार मेंदिखाई देता है, चाहेवह जीव हो, जड़हो, या कोई भीवस्तु—सबमें ईश्वर का वास है।

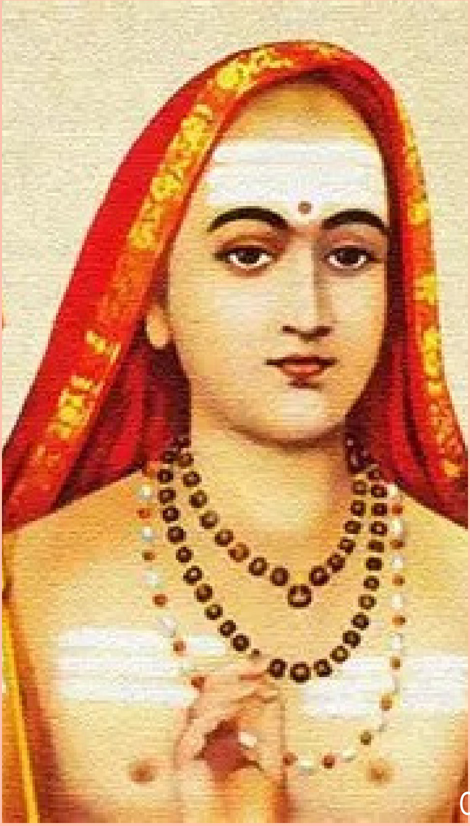
इसका अर्थ यह हैकि ईश्वर सर्वव्यापी है और कोईभी वस्तु उसकी सत्ता सेबाहर नहीं है।
“तेनत्यक्तेन भुञ्जीथा” का आशय हैकि मनुष्य को त्याग औरसंतोष के साथ जीवनजीना चाहिए। हमें वस्तुओं काउपभोग करना है, परंतुयह समझते हुए कि वेईश्वर की देन हैंऔर हमें उनमें आसक्तिनहीं करनी चाहिए।
“मागृधः कस्यस्विद्धनम्” का अर्थ हैकि किसी अन्य केधन या संपत्ति परलालच मत करो। लोभऔर स्वार्थ से दूर रहनाही धर्म है।

गहनसंदेश

- यह मंत्र हमें सिखाता है कि संसार की प्रत्येक वस्तु ईश्वर की है, इसलिए हमें उसे अपना मानकर अहंकार नहीं करना चाहिए।
- त्याग और संतोष जीवन का आधार होना चाहिए। भोग करना है, परंतु आसक्ति और लालच से मुक्त होकर।
- धन और संपत्ति पर अधिकार का मोह ही दुख का कारण है। जब हम समझते हैं कि सब ईश्वर का है, तब मन में शांति और संतुलन आता है।

कुर्वन्नेवेहकर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
एवंत्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यतेनरे॥





अर्थ:

मनुष्यको इस संसार मेंअपने कर्तव्यों (कर्मों) को करते हुएही सौ वर्ष तकजीने की इच्छा करनीचाहिए।
इस तरीके के अलावा कोईदूसरा मार्ग नहीं है, जिससेकर्म करते हुए भीमनुष्य उन कर्मों केबंधन (पाप/फल केचिपकने) से बच सके।

अन्धंतमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते। ततोभूय इव ते तमोय उ विद्यायां रताः॥

अर्थः
जो लोग केवल अविद्या (अज्ञान, केवल भौतिक ज्ञानया बाहरी चीज़ों) की उपासना करतेहैं, वे अंधकार मेंजाते हैं; लेकिन जोलोग केवल विद्या (आध्यात्मिकज्ञान) में ही लगेरहते हैं, वे उससेभी गहरे अंधकार मेंपड़ जाते हैं

अर्थात् केवल भौतिक याकेवल आध्यात्मिक, किसी एक पक्षमें अटक जाना गलतहै; सही मार्ग दोनोंके संतुलन में है, जहाँमनुष्य संसार के कर्तव्यों औरआध्यात्मिक समझ, दोनों कोसाथ लेकर चलता है।



विद्यांचाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते॥



अर्थ :

जो मनुष्य विद्या (आध्यात्मिक ज्ञान) और अविद्या (व्यावहारिक/सांसारिक ज्ञान व कर्म) दोनोंको साथ-साथ समझताऔर अपनाता है, वह अविद्याके माध्यम से संसार केकर्तव्यों को निभाते हुए "मृत्यु" (अज्ञानऔर जीवन के बंधनों) को पार कर जाताहै और विद्या केद्वारा अमृतत्व (मोक्ष, सच्ची शांति और आत्मिक मुक्ति) को प्राप्त करता है— अर्थात् जीवन में केवलएक पक्ष नहीं, बल्किज्ञान और कर्म दोनोंका संतुलन ही पूर्णता कामार्ग है।

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये॥

अर्थ :

ईशोपनिषद के इस श्लोक में साधक प्रार्थना करता है कि सूर्य का स्वर्णिम तेज परम सत्य के स्वरूप को ढक देता है, जैसे किसी पात्र का आवरण मुख को छिपा देता है। वह सूर्य देव से निवेदन करता है कि इस आभामय आवरण को हटाकर उसे सत्यधर्म का प्रत्यक्ष दर्शन कराएँ। इसका गहरा भाव यह है कि बाहरी प्रकाश और जगत की चमक वास्तविक ब्रह्मज्ञान को ढक देती है, और जब साधक त्याग, ध्यान तथा सत्यधर्म का पालन करता है, तभी वह उस आवरण को हटाकर परमात्मा का अनुभव कर सकता है। यह मंत्र हमें सिखाता है कि परम सत्य इंद्रियों और बाहरी जगत से परे है, और उसे केवल आत्मज्ञान तथा साधना द्वारा ही देखा जा सकता है।

ईशोपनिषद वेदों का अत्यंत संक्षिप्त किंतु गहन उपनिषद है, जिसमें केवल अठारह मंत्र हैं। इसके प्रत्येक मंत्र में जीवन, धर्म, त्याग, कर्म और आत्मज्ञान की गहरी शिक्षा निहित है। इसका मुख्य संदेश है कि समस्त जगत ईश्वर से व्याप्त है और मनुष्य को इस सत्य को समझकर जीवन जीना चाहिए।
ईशोपनिषद का प्रथम मंत्र कहता है कि संसार की हर वस्तु ईश्वर की है, इसलिए हमें लोभ और स्वार्थ छोड़कर संतोष और त्याग के साथ जीवन जीना चाहिए। यह उपनिषद हमें सिखाता है कि भोग और त्याग का संतुलन ही जीवन का धर्म है। वस्तुओं का उपयोग करो, परंतु उनमें आसक्ति मत रखो।
इसके आगे के मंत्र बताते हैं कि मनुष्य को निष्काम भाव से कर्म करना चाहिए। कर्म से भागना नहीं, बल्कि कर्म करते हुए ही सौ वर्षों तक जीने की इच्छा करनी चाहिए। यही कर्मयोग है, जो जीवन को सार्थक बनाता है।

ईशोपनिषद यह भी स्पष्ट करता है कि अविद्या और विद्या दोनों का संतुलन आवश्यक है। केवल भौतिक ज्ञान से मुक्ति नहीं मिलती, और केवल आध्यात्मिक ज्ञान से भी जीवन अधूरा है। दोनों का समन्वय ही पूर्णता देता है।
अंतिम मंत्रों में साधक सूर्य से प्रार्थना करता है कि उसके तेजस्वी आवरण को हटाकर परम सत्य का दर्शन कराए। यह प्रतीक है कि बाहरी जगत और उसकी चमक वास्तविक ब्रह्मज्ञान को ढक देती है, और साधना द्वारा ही उस आवरण को हटाकर परमात्मा का अनुभव किया जा सकता है।

सार रूप में:

ईशोपनिषद हमें यह शिक्षा देता है कि संसार में सब ईश्वर से व्याप्त है, जीवन में त्याग और संतोष अपनाना चाहिए, निष्काम भाव से कर्म करना चाहिए, विद्या और अविद्या का संतुलन बनाए रखना चाहिए, और अंततः आत्मज्ञान द्वारा परम सत्य का अनुभव करना चाहिए। यह उपनिषद जीवन को धर्म, कर्म और ज्ञान के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है और बताता है कि सच्चा सुख बाहरी वस्तुओं में नहीं, बल्कि आत्मा और ब्रह्म की एकता में है।

👉 यह सार ईशोपनिषद को वेदांत का हृदय बनाता है, क्योंकि इसमें संपूर्ण जीवन-दर्शन संक्षिप्त किंतु गहन रूप में समाहित है।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः



If you like my work, please contact me at:
ajaytilanthe31@gmail.com